ओ३म्

**“ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की देश की आजादी में भूमिका”**

-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

ऋषि दयानन्द (1825-1883) के समय में देश एक ओर जहां अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड, मिथ्या परम्पराओं व अनेकानेक सामाजिक बुराईयों से ग्रस्त था वहीं दूसरी ओर इन्हीं कारणों से वह विगत सात सौ से कुछ अधिक वर्षों से पराधीनता के जाल में भी फंसा हुआ था। ऋषि दयानन्द वेदों के उच्च कोटि विद्वान व सृष्टि के आदि काल से आरम्भ ऋषि परम्परा के योग्यतम प्रतिनिधि भी थे। वह राष्ट्र कि सच्चे पुरोहित एवं सभी देशवासियों के आचार्य, कर्तव्य व आचरण की शिक्षा देने वाले, गुरु भी थे। उनके सामने देश को अविद्या, अज्ञान व पाखण्डों से दूर करने की चुनौती थी और साथ ही देश की पराधीनता को भी समाप्त करना उनको अभीष्ट था। उन्होंने विचार कर देश से अविद्या व अन्धविश्वासों को दूर करने के कार्य को प्राथमिकता दी और सन् 1863 में वेदों का प्रचार, असत्य का खण्डन और सत्य का मण्डन करना आरम्भ कर दिया। धर्म विषयक सभी विषयों पर वह स्थान स्थान पर जाकर प्रवचन दिया करते थे और लोगों का शंका समाधान भी करते थे। शंका समाधान सुनकर व प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर पठित, शिक्षित व निष्पक्ष लोगों की सन्तुष्टि हुआ करती थी और उनमें से कुछ उनके अनुयायी बन जाते थे। पौराणिक हिन्दुओं की जिन प्रमुख मान्यताओं का वह खण्डन करते थे उनमें मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, बाल विवाह, बेमेल विवाह, जन्मना जातिवाद मुख्य थे वहीं सबको उन्नति के समान अवसर देने वाली गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित वैदिक वर्ण व्यवस्था का समर्थन भी वह करते थे। वेद विरोधी व मिथ्या परम्पराओं के समथर्कों को शास्त्रार्थ की चुनौती भी दी जाती थी। स्वामी जी ने अनेक मतों के विद्वानों से भिन्न भिन्न विषयों पर शास्त्रार्थ किये। सबसे मुख्य शास्त्रार्थ मूर्तिपूजा पर वाराणसी में 16 नवम्बर, सन् 1869 को काशी के राजा श्री ईश्वरीय प्रसाद सिंह की अध्यस्थता में हुआ था। इस शास्त्रार्थ में स्वामी जी अपने वैदिक पक्ष को प्रस्तुत करने वाले अकेले विद्वान थे जबकि पौराणिक मूर्तिपूजक विद्वानों की संख्या 30 से अधिक थी। श्रोताओं के रूप में भी लगभग 50 हजार की जनसंख्या शास्त्रार्थ स्थल आनन्दबाग में उपस्थित थी। इस शास्त्रार्थ का निर्णय स्वामी दयानन्द जी के पक्ष में हुआ था। कालान्तर में स्वामी जी ने अपने विचारों को अनेक ग्रन्थों के माध्यम से प्रस्तुत किया। संस्कृत व हिन्दी में ऋग्वेद (आंशिक) तथा यजुर्वेद के सम्पूर्ण भाष्य सहित सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय, पंचमहायज्ञविधि, गोकरूणानिधि, व्यवहारभानु आदि उनके कुछ प्रमुख ग्रन्थ हैं। उनके यह सभी ग्रन्थ ‘भूतो न भविष्यति’ की उपमा को चरितार्थ करते हैं। 10 अप्रैल, सन् 1875 को स्वामी जी ने मुम्बई में वेदों के प्रचार व प्रसार के लिए ‘आर्यसमाज’ नामक संगठन स्थापित किया। सच्ची आध्यामिकता के प्रचार, समाज सुधार, पाखण्ड व अन्धविश्वासों का निवारण, देश में शिक्षा के प्रचार प्रसार हेतु डीएवी स्कूल तथा गुरुकुलों की स्थापना तथा देश की आजादी में उनकी व उनकी अनुयायी संस्था आर्यसमाज की महत्वपूर्ण भूमिका है।

ऋषि दयानन्द के समय देश अंग्रेजों का गुलाम था। अंग्रेज देश वासियों का शोषण व उन पर अत्याचार करते थे। देश व देशवासियों की उन्नति के मार्ग बन्द थे। आजादी की बात करना अपनी मृत्यु को दावत देना था। कोई उचित मांग करने व गलत नीतियों का विरोध करने पर वह उसे सहन नहीं कर पाते थे। सन् 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम में देशवासियों का अमानवीय उत्पीड़न किया गया था। लोगों को ईसाई बनाने का षडयन्त्र भी किया जाता था। यह वह काल था जब आजादी का आन्दोलन आरम्भ नहीं हुआ था और न ही देश में आन्दोलन का कहीं वातावरण ही था। कांग्रेस की स्थापना भी सन् 1885 में हुई। इससे 22 वर्ष पूर्व ही ऋषि दयानन्द ने वेद प्रचार करना आरम्भ कर दिया था। सन् 1874 में उनके एक भक्त राजा जयकृष्ण दास ने उन्हें अपने प्रमुख व सभी विचारों का ग्रन्थ लिखने की प्रेरणा की जिससे वह लोग भी लाभान्वित हो सके जो उनके उपदेश सुनने आ नहीं पाते। ऐसे ग्रन्थ से वह लोग भी लाभान्वित हो सकते थे जो बहुत दूर रहते थे तथा सत्य धर्म व सत्य परम्पराओं को जानने के इच्छुक थे। ऐसे अनेक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्वामी दयानन्द जी ने सन् 1874 में सत्यार्थप्रकाश नामक अपना प्रमुख ग्रन्थ लिखा जिसका कुछ समय बाद सन् 1875 में प्रकाशन हुआ। इसका संशोधित संस्करण सन् 1883 में तैयार किया गया। 30 अक्तूबर, सन् 1883 को स्वामी जी की एक षडयन्त्र के अन्तर्गत मृत्यु के कारण संशोधित सत्यार्थप्रकाश का प्रकाशन सन् 1884 में हुआ। अपने इस ग्रन्थ में स्वामी जी ने कहीं स्पष्ट व कहीं संकेत ंरूप में देश की आजादी की चर्चा कर देशवासियों को देश को आजाद कराने के लिए प्रेरित किया।

अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में स्वदेशी राज्य वा स्वराज्य का स्पष्ट रूप से उल्लेख कर विदेशी राज्य को माता-पिता के समान कृपा, न्याय व दया तथा पूर्ण निष्पक्ष होने पर भी उसके स्वराज्य वा स्वदेशी राज्य के समान न होने की घोषणा कर उन्होंने आजादी की नींव रख दी थी, ऐसा हम अनुभव करते थे। यह बता दें कि उस समय स्वदेशी राज्य व स्वराज्य की कहीं चर्चा नहीं की जा रही थी। इन शब्दों का इतिहास में पहली बार प्रयोग उन्हीं के द्वारा हुआ है। वह लिखते हैं **‘अब अभाग्योदय से और आर्यो के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त (भारत) में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय, राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतन्त्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशवासियों को अनेक प्रकार का दुःख भोगना पड़ता है।’** इसके बाद उन्होंने जो लिखा है स्वर्णिम अक्षरों में लिखने योग्य है व एक प्रकार से देश को आजाद कराने का एलान है। वह लिखते हैं **‘कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रहरहित अपने और पराये का पक्षपातशून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं हैं।’** इन पंक्तियों में स्वामी दयानन्द जी ने स्वदेशी राज्य को सर्वोपरि उत्तम बताया है और कहा है कि अंग्रेजों के राज्य में अनेक गुण होने पर भी उनका राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं है। यहां संकेत रूप में वह देशवासियों को पूर्ण सुख की प्राप्ति के लिए स्वदेशी राज्य की स्थापना के लिए प्रयत्न वा आन्दोलन की प्रेरणा करते हुए प्रतीत हो रहे हैं।

स्वामी दयानन्द जी के अन्य सभी ग्रन्थों में भी देश के स्वाभिमान वा आत्म गौरव को जगाने के लिए प्रचुर सामग्री मिलती है। लेख की सीमा के कारण सबका उल्लेख नहीं किया जा सकता। उनके ग्रन्थों से कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं। सत्यार्थप्रकाश में वह लिखते हैं कि ‘यह आर्यावर्त (भारत) देश ऐसा देश है जिसके सदृश्य भूगोल में दूसरा कोई देश (इंग्लैण्ड, अमेरिका व अन्य भी) नहीं है। इसीलिये इस (आर्यावर्त देश की) भूमि का नाम सुवर्णभूमि है क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है। इसीलिये सृष्टि की आदि में (1,96,08,53 हजार वर्ष पूर्व) आर्य लोग (तिब्बत से सीधे) इसी देश में आकर बसे। (सृष्टि का आदि काल होने से यह सारा स्थान व देश खाली पड़ा था, कोई मनुष्य यहां रहता नहीं था, यह आर्य ही आदिवासी थे जिन्होंने इस आर्यावर्त वा भारत देश को बसाया, इनसे पूर्व अन्य कोई आदिवासी यहां बसता वा रहता नहीं था)। इसीलिए हम (ऋषि दयानन्द सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के) सृष्टि विषय में कह आये हैं कि आर्य नाम उत्तम पुरुषों का है और आर्यों से भिन्न मनुष्यों का नाम दस्यु है। जितने भूगोल में देश हैं वे सब इसी (आर्यावर्त भारत) देश की प्रशंसा करते हैं और आशा रखते हैं कि पारसमणि पत्थर सुना जाता है, वह बात तो झूठी है, परन्तु आर्यावर्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिस को लोहेरूप दरिद्र विदेशी छूते के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।’ इन पंक्तियों में स्वामी दयानन्द जी ने भारत को विश्व का सबसे उत्तम देश बताया है और कहा है कि विदेशी (अंग्रेज आदि) इसके स्पर्श से अर्थात् संगति से धनाढ्य हो जाते हैं। इन पंक्तियों का उद्देश्य देशवासियों के आत्म गौरव को जगाना था। हमने पहली बार जब इन पंक्तियों को पढ़ा था तो हमने भी आत्मगौरव व रोमांच का अनुभव किया था।

ऋषि दयानन्द देश को आजाद कराने के लिए देशवासियों में आत्मगौरव में और वृद्धि करने के लिए यह भी बताते हैं कि सृष्टि के आरम्भ से पांच सहस्र वर्ष पूर्व महाभारतकाल पर्यन्त भारत वा आर्यावर्त देश का ही समस्त भूमण्डल पर सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि राज्य था। सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में उनके शब्द हैं **‘सृष्टि (के आरम्भ) से ले के पांच सहस्र वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था। अन्य देशों में माण्डलिक अर्थात् छोटे-छोटे राजा रहते थे क्योंकि कौरव पाण्डव पर्यन्त यहां के राज्य और राजशासन में सब भूगोल के सब राजा और प्रजा चले थे।’** वह यह भी कहते हैं कि महाराजा युधिष्ठिर जी के राजसूय यज्ञ और महाभारत युद्ध पर्यन्त यहां के राज्य के आधीन सब राज्य थे। यह इसलिए लिखा है जिससे देशवासी यह जान सकें कि अंग्रेजों की गुलामी तो दो सौ वर्ष से भी कम समय से है जबकि हमारे पूर्वजों ने तो पूरे विश्व पर 1.96 अरब वर्ष तक सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य किया है।

ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में ही एक प्राचीन ग्रन्थ **‘मैत्रयुपनिषद’** का प्रमाण देकर बताया है कि सृष्टि के आरम्भ से लेकर महाभारतपर्यन्त चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्यकुल में ही हुए थे। अब इनके सन्तानों का अभाग्योदय होने से राजभ्रष्ट होकर विदेशियों (अंग्रेजों) के पादाक्रान्त हो रहे हैं। जैसे यहां सुद्युम्न, भूरिद्युम्न, इन्द्रद्युम्न, कुवलयाश्व, यौवनाश्व, वद्ध्रयश्व, अश्वपति, शशविन्दु, हरिश्चन्द्र, अम्बरीष, ननक्तु, शर्याति, ययाति, अनरण्य, अक्षसेन, मरुत और भरत सार्वभौम सब भूमि (विश्व) में प्रसिद्ध चक्रवर्ती राजाओं के नाम लिखे हैं वैसे स्वायम्भुवादि चक्रवर्ती राजाओं के नाम स्पष्ट मनुस्मृति, महाभारतादि ग्रन्थों में लिखे हैं। इस को मिथ्या करना अज्ञानी और पक्षपातियों का काम है। इसकी कहीं कोई चर्चा नहीं करता। कम्युनिष्ट इतिहासार न करें, परन्तु भारतीय मनीषियों को तो इसका ज्ञान होना चाहये और मीडिया में भी देशवासियों को इसकी जानकारी दी जानी चाहिये। आत्मगौरव में वृद्धि का यह भी एक महत्वपूर्ण कारक है। स्वामी दयानन्द जी सत्यार्थप्रकाश के आठवें समुल्लास में एक महत्वपूर्ण बात यह भी कही हैं ‘परदेशी (अंग्रेज व अन्य विदेशी विधर्मी) स्वदेश में व्यवहार वा राज्य करें तो विना दारिद्रय और दुःख के दूसरा कुछ भी (परिणाम) नहीं हो सकता।‘

ऐसे अनेक प्रमाण स्वामी दयानन्द जी के सत्यार्थप्रकाश, आर्याभिविनय, संस्कृत वाक्य प्रबोध आदि ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं। यह सब लिखने के पीछे उनका उद्देश्य यही स्पष्ट जान पड़ता है कि वह देशवासियों को यह सब तथ्य बता कर विदेशी राजनैतिक परतन्त्रता को दूर करने की ओर अग्रसर कर रहे थे। स्वामी जी के जीवनकाल व उसके बाद उनके यह क्रान्तिकारी विचार उनके सहस्रों व लाखों अनुयायियों व कुछ इतर देशवासियों में भी पहुंचे थे। योगी अरविन्द ने भी स्वामी दयानन्द जी को पढ़ा था। अतः इन विचारों का प्रभाव देशवासियों पर पड़ा। ऋषि दयानन्द जी की मृत्यु हो जाने के बाद आचर्यसमाज को स्वतन्त्रता आन्दोलन का नेतृत्व करना चाहिये था परन्तु ऐसा लगता है कि उनसे यह चूक हो गई। जो भी हो, आर्यसमाज के अनुयायियों ने आजादी के आन्दोलन को अपने कार्यों व बलिदानों से पोषित किया। देश की आजादी के आन्दोलन में सक्रिय लोगों में प्रायः सभी आर्यसमाजी किसी न किसी रूप में जुड़े होते थे। यहां तक कहा जाता है कि आजादी के आन्दोलन में 80 प्रतिशत लोग आर्यसमाजी थे। यह भी बता दें कि महादेव रानाडे और पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा स्वामी दयानन्द जी के दो प्रमुख शिष्य थे। रानाडे जी के शिष्य गोपाल कृष्ण गोखले जी थे और उनके महात्मा गांधी। इसी प्रकार क्रान्तिकारियों के आद्य गुरु व आचार्य पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा थे जिन्होंने इंग्लैण्ड में **‘इण्डिया हाउस’** की स्थापना की थी। प्रायः सभी क्रान्तिकारी वहां रहा करते थे। वीर सावरकर जी व अन्य प्रमुख क्रान्तिकारी भी इण्डिया हाउस में ही रहते थे। आजादी के प्रमुख राष्टीय नेता स्वामी श्रद्धानन्द जी, लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द जी, पं. रामप्रसाद बिस्मिल, शहीद भगतसिंह जी का पूरा परिवार स्वामी दयानन्द का अनुयायी था। इ न कुछ उदाहरणों व चर्चा से स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द व आर्यसमाज का देश की आजादी में प्रमुख योगदान था। आज भी आर्यसमाज देश व समाज हित अनेकानेक काम कर रहा है। यदि सारा देश आर्यसमाज की विचारधारा को स्वीकार कर ले तो यह देश व पृथिवी सुख का धाम बन सकती है।

सत्यार्थप्रकाश में ऋषि दयानन्द ने योगेश्वर कृष्ण जी की प्रशंसा करते हुए कहा है कि यदि वह सचमुच होते तो वह अंग्रेजों के धुर्रे उड़ा देते। सम्भवतः उनकी मृत्यु के कारणों में से एक कारण सत्यार्थप्रकाश में विदेशी राज्य के विरुद्ध लिखे उनके शब्द हो सकते हैं। स्वामी दयानन्द मूर्तिपूजा-कृष्ण-अंग्रेज प्रसंग में लिखते हैं कि ‘जब संवत् 1916 के वर्ष में (सन् 1857 के स्वातन्त्र्य समर में) तोपों के मारे मन्दिर की मूर्तियां अंग्रेजों ने उड़ा दी थीं तब मूर्ति कहां गई थी? प्रत्युत बाघेर लोगों ने जितनी वीरता की और लड़े, शत्रुओं को मारा, परन्तु मूर्ति एक मक्खी की टांग भी न तोड़ सकी। जो श्री कृष्ण के सदृश कोई (बुद्धिमान, क्षत्रिय योद्धा) होता तो इनके (अंग्रेजों के) धुर्रे उड़ा देता और ये भागते फिरते। भला यह तो कहो कि जिस का रक्षक (कृष्ण जी की मूर्ति) मार खाय उस के शरणागत (कृष्ण जी के भक्त) क्यों न पीटे जायें? इसी के साथ लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**